# विचार संगम

## भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

# विचार संगम

## भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा
Ph.D., D.Lit. (Sub.)
निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

**Books n Books**
51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :
**पुष्पा शर्मा**
**Books n Books**
51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001
ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण
प्रथम 2025

**ISBN : 978-81-993854-0-5**

**मूल्य - 400/-**

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

## 13

# रसखान : कृष्ण भक्ति का विलक्षण व्यक्तित्व

---

**रामस्वरूप गढ़वाल**
**सहायक आचार्य ( शिक्षा विभाग )**
**हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर**

---

सूफी परम्परा का उद्‌भव लगभग 8वीं-9वीं शताब्दी ई. में माना जाता है। इसके विषय में विद्वानों के मत भिन्न हैं – कुशैरी और शहाबुद्दीन सहरवर्दी के अनुसार यह शब्द पैगम्बर की मृत्यु के दो शताब्दी पश्चात प्रचलन में आया, जबकि कुछ विद्वान इसे पैगम्बर के समय से भी जुड़ा मानते हैं। सूफी सम्प्रदाय की विचारधारा का मूल आधार कुरान और हदीस माने जाते हैं, यद्यपि 'हदीस' शब्द स्वयं कुरान में नहीं मिलता।

सूफी कवियों ने प्रेम और एकता को अपने दर्शन का केन्द्र बनाया। उन्होंने मानवता, सहिष्णुता और प्रेम को ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग* बताया। कुतुबन, मंझन, उसमान, शेख नबी, कासिमशाह, नूर मोहम्मद आदि सूफी कवियों की रचनाओं ने भारतीय संस्कृति, भाषा और साहित्य में गंगा-जमुनी परम्परा को पुष्ट किया।

इसी परम्परा में रसखान का व्यक्तित्व अत्यन्त विलक्षण है। वे जन्म से मुसलमान होते हुए भी कृष्ण भक्ति में लीन होकर ब्रज संस्कृति के साक्षात प्रतीक बन गए। उनके काव्य में सूफी प्रेमदर्शन और कृष्णभक्ति का अद्‌भुत संगम मिलता है। रसखान ने कृष्ण को ईश्वर का साकार रूप मानकर उनकी लीलाओं में निराकार प्रेम का साकार अनुभव किया। इस प्रकार रसखान सूफी और भक्ति परम्परा के सेतु बनकर भारतीय एकता, सौहार्द और आध्यात्मिक प्रेम के आदर्श उदाहरण सिद्ध हुए।

सूफियों ने प्रेम को परम सत्ता तक पहुँचने का सर्वोच्च मार्ग माना। उनके अनुसार ईश्वर-प्राप्ति का साधन केवल ज्ञान या कर्म नहीं, बल्कि इश्क (प्रेम) है। यही उनका रहस्यवाद कहलाता है। सूफियों का चरम लक्ष्य 'फना' (अहं का लय) और 'बका' (ईश्वर में स्थायित्व) है अर्थात् स्वयं को मिटाकर ईश्वर में विलीन हो जाना।

उनकी साधना की अवस्था में 'वज्द' (भाव-विभोरता), 'समा' (संगीत), 'जौक' (आनंद), 'जज़्बा' (भावावेश), 'गैबत' (अहं से बेखबर अवस्था) आदि अनुभव शामिल हैं। इस भावाविष्ट अवस्था में सूफी का 'मैं' लुप्त होकर 'तू' में समा जाता है, और वह पूर्णत: ईश्वरमय हो उठता है।

सूफी कवियों ने अपने प्रेम-दर्शन को लौकिक प्रेम की प्रतीकात्मक भाषा में व्यक्त

किया। उनके लिए लौकिक प्रेम ईश्वर-प्रेम का सेतु है। इस माध्यम से जीव सृष्टि के प्रत्येक रूप में ईश्वर का दर्शन करता है। मंझन जैसे कवियों ने कहा कि सारी सृष्टि एक ही रूप की विविध अभिव्यक्ति है, चाहे वह भिखारी हो या राजा, सभी में वही ईश्वरीय सत्ता प्रकट है।

इस प्रकार सूफी दर्शन में 'प्रेम' सार्वभौमिक सत्य है— जो न अरब का है, न भारत का, बल्कि सम्पूर्ण मानवता का। सूफियों के अनुसार प्रेम ही वह शाश्वत तत्व है जहाँ भारत और ईरान, पूरब और पश्चिम के विचार एक बिन्दु पर मिल जाते हैं।

सूफियों के लिए प्रेम समस्त साधना का मूलाधार है, जैसे 'तोबा' (प्रायश्चित) सभी अवस्थाओं का। सच्चा प्रेमी 'फना, बका, सहाव, और महाव' जैसी आत्मोन्नत अवस्थाओं को प्राप्त करता है। यह प्रेम केवल भावना नहीं, बल्कि आध्यात्मिक शक्ति है जो साधक को समस्त सांसारिक वासनाओं से मुक्त कर ईश्वर के निकट ले जाती है। सूफियों के मत में प्रेम ईश्वर का सारतत्त्व और उसका उपहार है, जो मनुष्य के हृदय का पर्दा हटाकर उसे ईश्वर से मिलाता है। इस प्रकार उनके दर्शन का सार है – 'सौन्दर्य से प्रेम और प्रेम से मुक्ति।'

सूफी परंपरा में विरह (विप्रलंभ) को भी अत्यन्त महत्व दिया गया है। बिना विरह की पीड़ा के ईश्वर-साक्षात्कार सम्भव नहीं। सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने 'पद्मावत', 'अखरावट' और 'आखिरी कलाम' में इसी विरह-भाव को अत्यंत मार्मिक रूप में व्यक्त किया है। उनकी पंक्तियाँ –

'यह तन जारौं छार कै, कहौं कि पवन उड़ाउ...'

इस भावना की चरमावस्था को दर्शाती हैं, जहाँ साधक अपने अस्तित्व को मिटाकर प्रिय (ईश्वर) के चरणों में धूल बन जाने की आकांक्षा करता है।

जायसी की यह विरह-भावना भारतीय लोकमानस के साथ गहराई से जुड़ती है और आगे के कवियों, विशेषकर तुलसीदास की भक्ति-काव्य परम्परा को भी प्रेरणा प्रदान करती है। 'पद्मावत' की भाषा और शैली – दोहा-चौपाई में रचित अवधी आगे चलकर 'रामचरितमानस' की काव्य-परंपरा की भूमि तैयार करती है। इस प्रकार जायसी का सूफी प्रेमदर्शन भारतीय भक्ति-साहित्य में एक सेतु के समान है, जहाँ ईश्वर, प्रेम और विरह तीनों का आध्यात्मिक संगम होता है।

सूफियों ने ईश्वर को 'माशूक' (प्रियतम) और स्वयं को 'आशिक' (प्रेमी) माना। उनके लिए जीवन का परम उद्देश्य ईश्वर से अनन्त प्रेम करना है। यह प्रेम मात्र भक्ति नहीं, बल्कि आत्मा और परमात्मा के गहन मिलन की साधना है।

सूफियों के अनुसार ईश्वर तक पहुँचने के लिए मनुष्य को पहले 'इश्क मजाजी' (सांसारिक प्रेम) का अनुभव आवश्यक है, क्योंकि वही 'इश्क हकीकी' (आध्यात्मिक

प्रेम) की ओर ले जाने वाली सीढ़ी है। इसी भाव को सूफी कहावत में कहा गया है – 'अल–मजाजु कन्तरतुल–हकीकी' अर्थात् 'सांसारिक प्रेम ही आध्यात्मिक प्रेम का सेतु है।'

इस प्रेम–दर्शन में सांसारिक सौन्दर्य (हुस्न) को भी ईश्वर की झलक माना गया है। जहाँ कहीं भी सौन्दर्य है, वहाँ ईश्वर के सौन्दर्य का अंश विद्यमान है। सूफी साधक पहले इसी सांसारिक सौन्दर्य पर ध्यान केंद्रित करता है, जिससे इश्क मजाजी की चिंगारी धीरे–धीरे इश्क हकीकी की ज्योति में परिवर्तित हो जाती है।

अतः सूफी मत में सांसारिक प्रेम गन्तव्य नहीं, बल्कि साधना का माध्यम है – एक ऐसा दीपक जो साधक के हृदय में ईश्वर–प्रेम का आलोक प्रज्वलित करता है।

सूफी विचारधारा में हुस्न (सौन्दर्य) एवं इश्क (प्रेम) एक महत्वपूर्ण विषय है। अर्लगानी ने हुस्न के दो प्रकार बताये हैं–प्रथमतः 'जाहिरी–हुस्न' (बाह्य सौन्दर्य) द्वितीयतः 'बातिनी–हुस्न' (आन्तरिक सौन्दर्य)।

सूफियों के अनुसार संसार में दो प्रकार की दृष्टियाँ होती हैं – सामान्य नेत्र की दृष्टि, जो भौतिक जगत को देखती है, और हृदय के नेत्र की दृष्टि, जो ईश्वर के सौन्दर्य का अनुभव करती है। पहला सभी को उपलब्ध है, पर दूसरा केवल साधक और प्रेममग्न आत्मा को ही प्राप्त होता है।

सूफी मानते हैं कि प्रेम ही सृष्टि की उत्पत्ति का मूल कारण है, और कुरान में भी ईश्वर को 'प्रेम करने वाला' बताया गया है। जब सांसारिक प्रेम – 'इश्क मजाजी' आत्मिक प्रेम 'इश्क हकीकी' में परिवर्तित हो जाता है, तब साधक आत्मानंद को प्राप्त करता है। इस स्थिति में वह स्वयं प्रेम का रूप बन जाता है; उसका सम्पूर्ण अस्तित्व ईश्वर–प्रेम में विलीन हो जाता है।

सूफी कवि अमीर खुसरो ने इस दिव्य अनुभव में विरह को सर्वोच्च स्थान दिया है। उनके अनुसार, विरह की अग्नि में जले बिना परमात्मा का मिलन सम्भव नहीं। उनके प्रसिद्ध दोहे –

खुसरो रैन सुहाग की, जागी पी के संग।
तन मेरा मन पियू को, दोउ भए इक रंग॥

में आत्मा और परमात्मा की एकात्मता और प्रेमानुभूति का अत्यंत मार्मिक चित्रण है। यह वही भाव है जो भारतीय भक्ति परम्परा में राधा–कृष्ण के प्रेम में भी झलकता है जहाँ प्रेमी अपने अस्तित्व का रंग मिटाकर प्रिय के रंग में रंग जाना चाहता है।

सूफी कवि अमीर खुसरो ने प्रेम की तीव्र भावनाओं को नायिका के विरह और उलाहने के माध्यम से व्यक्त किया है –

यो गए बालम वो गए नदियों पार,
आपे पार उतर गए, हम तो रहे मजधार।

यहाँ प्रेमी आत्मा–परमात्मा के मिलन का प्रतीक है, जो सांसारिक जीवन की नदी पार कर चुका है, जबकि साधक अब भी मझधार में, विरह की पीड़ा में तैरता है।

शेख हुज्वेरी के अनुसार जो व्यक्ति प्रेम में आत्मशुद्ध (मुस्सफा) होता है, वही 'साफी' या 'सूफी' कहलाता है। और अल–फाराबी ने प्रेम को ही ईश्वर का स्वरूप माना है। सूफियों के लिए प्रेम केवल भावना नहीं, बल्कि मुक्ति का मार्ग है, जो साधक को सांसारिक माया–मोह से विमुक्त कर देता है।

इस प्रेम के उदय होने पर सूफी का हृदय सभी जीवों के प्रति करुणा, दया और अनुराग से भर उठता है। वह स्वयं त्याग और कष्ट को स्वीकार कर दूसरों को सुख देने में आनंद पाता है, क्योंकि उसकी दृष्टि में सभी प्राणियों में ईश्वर का वास है।

वापजीद के अनुसार, जिस व्यक्ति से ईश्वर प्रेम करता है, उसमें तीन दिव्य गुण विकसित होते हैं – समुद्र जैसी उदारता, सूर्य के समान दया और करुणा, पृथ्वी जैसी विनम्रता।

सूफी परंपरा में प्रेम को आत्मा और परमात्मा के मिलन का माध्यम माना गया है। यहाँ प्रेमी (आत्मा) और माशूका (परमात्मा) के रूपक के माध्यम से भक्ति और विरह की अनुभूति व्यक्त होती है। अमीर खुसरो ने विरहिणी की तड़प और मिलन की आकांक्षा को लोक प्रतीकों जैसे मल्लाह, नदी, गहनों आदि के द्वारा सजीव बनाया है, जिससे सूफी प्रेम का आध्यात्मिक स्वरूप भारतीय लोक चेतना से जुड़ता है।

सूफी संतों–खुसरो और बुल्लेशाह दोनों ने प्रेम को साधना और आत्मा–परमात्मा के अभेद का साधन बताया है। बुल्लेशाह का 'रांझा रांझा कर दी...' प्रेम की उस चरम अवस्था को व्यक्त करता है, जहाँ साधक और ईश्वर में कोई भेद नहीं रहता। यही सूफी दर्शन की अंतिम परिणति है।

सूफी संतों ने प्रेम, सौन्दर्य और भक्ति को आध्यात्मिक अनुभूति के माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया। कुतुवन, मंझन और ताज बीबी जैसे सूफी कवियों ने ईश्वर को सर्वव्यापी मानते हुए विरह और प्रेम के माध्यम से आत्मा–परमात्मा के मिलन की अनुभूति का वर्णन किया। ताज बीबी ने रसखान और मीराबाई की भांति ब्रजभाषा में कृष्ण–भक्ति को सूफी भाव से जोड़ा।

सूफी काव्य परंपरा में सौन्दर्य का प्रतीकात्मक और दार्शनिक विवेचन हुआ – मलिक मोहम्मद जायसी की पद्मावत, मौलाना रूमी की मसनवी, जामी की यूसुफ–जुलेखा, और अमीर खुसरो की लैला–मजनूं जैसी कृतियाँ इसी परंपरा की प्रमुख उदाहरण हैं। इन

ग्रंथों में सांसारिक प्रेम को ईश्वरीय प्रेम का प्रतीक बनाकर आत्मा और परमात्मा के अभेद को व्यक्त किया गया है, यही सूफी काव्य की आत्मा है।

सूफी परंपरा में सौन्दर्य को केवल भौतिक नहीं, बल्कि दैवी और आध्यात्मिक प्रतीक के रूप में देखा गया है। जायसी, निजामी, हाफिज, मौलाना दाऊद और कुतुवन जैसे कवियों ने रूप-सौन्दर्य के माध्यम से आत्मा और परमात्मा के मिलन की अनुभूति को व्यक्त किया।

जायसी की पद्मावत में पद्मावती का सौन्दर्य दैवी दृष्टि से चित्रित है, तो निजामी की खुसरो-शीरीं और हाफिज की दीवान-ए-हाफिज में जुल्फ, नेत्र, अधर आदि प्रतीकों से प्रेम और भक्ति की गहराई प्रकट की गई है। मौलाना दाऊद की चंदायन में चंदा के रूप में सौन्दर्य की दैवी अभिव्यक्ति दिखाई देती है, जहाँ उसके अंग-प्रत्यंग से समस्त सृष्टि में पवित्रता और आनंद फैलता है।

इन कवियों के लिए सौन्दर्य केवल इन्द्रियानुभव नहीं बल्कि ईश्वरीय प्रकाश का प्रतीक है, जिससे जीव ईश्वर के साक्षात्कार की ओर अग्रसर होता है। इस प्रकार सूफी कवियों ने शारीरिक सौन्दर्य को आध्यात्मिक प्रेम और आत्मा-परमात्मा की एकता का माध्यम बनाकर काव्य को दार्शनिक ऊँचाई प्रदान की।

हाफिज ने अपनी रचनाओं में जुल्फ (केश) को सूफी प्रतीक के रूप में अत्यंत गूढ़ और दार्शनिक अर्थों में प्रस्तुत किया है। उनके लिए जुल्फ केवल शारीरिक सौन्दर्य का अंग नहीं, बल्कि ईश्वरीय रहस्य, माया और आकर्षण का प्रतीक है, जो आत्मा को मोहपाश में बाँध लेता है और साथ ही परमात्मा तक पहुँचने का साधन भी बनता है।

उनके दीवान-ए-हाफिज में जुल्फ की अनेकों उपमाएँ मिलती हैं–

* जुल्फ को बंधन, जाल, अंधकार, सांप, फंदा और श्रृंखला के रूप में दिखाया गया है, जिसमें प्रेमी (आत्मा) फँसकर भी मुक्ति का अनुभव करता है।

* जुल्फ की सुगंध और कोमलता को कस्तूरी, बादे-सबा (प्रातः समीर) और स्वर्गीय फूलों से तुलना दी गई है, जो प्रेम की गहराई और आध्यात्मिक माधुर्य को प्रकट करती है।

* जुल्फ का अंधकार, प्रेमी के लिए मार्ग की कठिनाई है, परंतु उसी के भीतर मुख (प्रकाश) छिपा है–यह सूफी चिंतन में प्रकाश और अंधकार के अद्वैत संबंध का प्रतीक है।

इस प्रकार, हाफिज के काव्य में सौन्दर्य का आध्यात्मिक रूपांतरण हुआ है। जुल्फ, अधर, नयन आदि रूप-संकेतों के माध्यम से उन्होंने प्रेम, भक्ति, विरह, और आत्मा-परमात्मा की एकता को दार्शनिक सौन्दर्य के रूप में व्यक्त किया। उनके काव्य में सांसारिक

प्रेम धीरे-धीरे रूपान्तरित होकर ईश्वरीय प्रेम की अनुभूति का माध्यम बन जाता है—यही हाफिज के सूफी काव्य की आत्मा है।

हाफिज का काव्य गहरे रहस्यात्मक और दार्शनिक चिंतन से ओतप्रोत है। उनके दीवान में 'जुल्फ' केवल शारीरिक सौन्दर्य का चित्रण नहीं, बल्कि परमात्मा की रहस्यमयी अभिव्यक्ति और साधक की आत्मानुभूति का प्रतीक है। सूफी दृष्टि में जुल्फ आत्मा को मोहजाल में बाँधती हुई भी ईश्वर की ओर ले जाने वाली शक्ति बन जाती है।

हाफिज ने सूफीमत की गहराई को अपने काव्य में इस प्रकार समाहित किया कि उनके चित्रण में सांसारिक प्रेम, दार्शनिक आध्यात्मिकता में रूपांतरित हो गया। सूफी साधक के लिए ईश्वर-प्राप्ति (वस्ल) हेतु तोबा, जुहुद, फकर, सब्र, और रिजा जैसे गुणों का पालन आवश्यक बताया गया है। इस प्रकार हाफिज का काव्य केवल सौन्दर्य का नहीं, बल्कि ईश्वर से आत्मिक एकत्व और समर्पण का आध्यात्मिक संदेश देता है।

सूफी काव्य में 'तिल' केवल श्रृंगार का प्रतीक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक रहस्य और विरह की अनुभूति का प्रतीक है। फारसी कवियों जैसे निजामी ने तिल को प्रेम के आकर्षण और ईश्वरीय जादू के रूप में चित्रित किया है, जबकि हिन्दी कवियों – विशेषतः कुतुबन (मृगावती) और मौलाना दाऊद (चंदायन) ने इसे विरह, ताप और साधक की तड़प के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया।

'मृगावती' में तिल को 'विषधर' और 'वज्र' कहा गया है जो साधक के हृदय में तप उत्पन्न करता है, वहीं 'चंदायन' में यह **भ्रमर के समान ईश्वर की ओर आकृष्ट आत्मा का संकेत देता है। इस प्रकार सूफी और हिन्दी दोनों परम्पराओं में तिल लौकिक सौंदर्य से ऊपर उठकर परम सौंदर्य (ईश्वर) के बोध का माध्यम बन जाता है।

सूफी परम्परा और उससे प्रभावित हिन्दी काव्य में 'तिल' केवल शारीरिक सौन्दर्य का अलंकार नहीं, बल्कि आध्यात्मिक विरह, प्रेम और ईश्वर की खोज का प्रतीक बन गया है। मौलाना दाऊद से लेकर जायसी, कुतुबन, मंझन और उसमान तक सभी कवियों ने तिल के माध्यम से प्रेम के रहस्य और साधक की तड़प को व्यक्त किया।

'मृगावती' में तिल को विषधर और वज्र समान विरह का दाहक चिन्ह माना गया, जबकि 'पद्मावत' में यह काम और काल दोनों का प्रतीक बनकर नायक को दग्ध करता है। मंझन ने 'मधुमालती' में तिल को प्रिय की आँखों की छाया बताया है, जो प्रेम की सूक्ष्म अनुभूति का संकेत है, और उसमान ने 'चित्रावली' में इसे सृष्टिकर्ता की रचना की अंतिम बूँद कहा है, जिससे सौन्दर्य पूर्ण होता है।

इस प्रकार, सूफी और हिन्दी दोनों काव्य परम्पराओं में तिल लौकिक रूप से सौन्दर्य का चिह्न होते हुए भी अलौकिक दृष्टि से ईश्वरीय प्रेम, विरह, और आत्मानुभूति का गूढ़

प्रतीक बन गया है,  वह बिंदु जहाँ मानवीय प्रेम दिव्य प्रेम में परिवतिज़्त हो जाता है।

मंझन की 'मधुमालती' में तिल को श्रृंगार की चरम अवस्था माना गया है, परन्तु उसका अर्थ केवल लौकिक सौन्दर्य नहीं है – वह आत्मा और परमात्मा की एकता का प्रतीक बनकर प्रकट होता है। मंझन की दृष्टि में तिल मुख की कोमलता पर झिलमिलाता ईश्वरीय प्रकाश का सूक्ष्म बिंदु है, जो प्रेम की पूर्णता का संकेत देता है। उन्होंने फारसी कवियों की तरह तिल को काल, विरह या पीड़ा का प्रतीक नहीं माना, बल्कि उसे अनन्त सौन्दर्य और आध्यात्मिक समरसता का प्रतीक रूप दिया।

मौलाना नमी और निजामी ने जहाँ तिल को दैवी आकर्षण और ईश्वर प्रदत्त सौंदर्य का केंद्र माना, वहीं मंझन ने उसे प्रेम, भक्ति और सृष्टि की एकात्म चेतना के रूप में देखा। इस प्रकार, 'मधुमालती' में तिल केवल रूप–शोभा का चिह्न न रहकर सृष्टि और सृष्टिकर्ता के मधुर संयोग का दार्शनिक प्रतीक बन गया है, जहाँ श्रृंगार आध्यात्मिक अनुभूति में रूपांतरित हो जाता है।

हाफिज के दीवान में 'तिल' (खाल) का चित्रण केवल रूप–सौंदर्य का नहीं, बल्कि एक गहन आध्यात्मिक प्रतीक का रूप ले लेता है। सूफी चिंतन में हाफिज ने तिल को दैवी रहस्य, बंधन, प्रेम की परीक्षा, और रूह (आत्मा) के खुदा से मिलन की जटिल प्रक्रिया का प्रतीक माना है।

'अगर आँ तुर्क–ए–शीराजी' में हाफिज तिल को ऐसा आकर्षक बिंदु बताते हैं जिसके लिए वे समरकंद और बुखारा जैसी सम्पूर्ण नगरी दान करने को तैयार हैं। यह तिल लौकिक प्रेम में सौंदयज़् की चरम सीमा को दिखाता है।

'जुल्फे ऊ दाम अस्त बखालश दान' में जुल्फ जाल है और तिल उस जाल का दाना – अर्थात् प्रेमी आत्मा उसी तिल के आकर्षण से प्रेम–जाल में फँस जाती है। यह सूफी साधक के ईश्वर में विलय की प्रतीकात्मक अवस्था है।

'आँ दिल बनुमा कि दर रहे ऊ' और 'सबादे लौहे बीनिश' जैसे शेरों में तिल को खुदा के रहस्य की बिंदु–आकृति बताया गया है, जहाँ सम्पूर्ण सृष्टि की व्याख्या निहित है। यह 'लौह–ए–बीनिश' (दृष्टि की तख्ती) अर्थात् ज्ञान का सूक्ष्म केन्द्र बन जाता है।

'मुर्गे रूहम' और 'अज दानये खाल व दामे जुल्फत' में तिल और जुल्फ मिलकर आत्मा (मुर्गे–रूह) को अपने जाल में बाँध लेते हैं। यह उस स्थिति का प्रतीक है जब साधक की आत्मा परमतत्व के आकर्षण से मुक्त नहीं रह पाती – वह प्रेम में लीन होकर 'फना–फिल–खुदा' की अवस्था प्राप्त करती है।

इस प्रकार, हाफिज के काव्य में 'तिल' केवल देह का अलंकार नहीं, बल्कि ईश्वर की निकटता, प्रेम की बन्धनमय मधुरता, और आत्मा के विलय की दार्शनिक प्रतीकात्मकता

है। यह वही 'सूफी सौन्दर्य-दर्शन' है जिसमें लौकिक प्रेम, अलौकिक प्रेम का माध्यम बनकर सृष्टि और सृष्टिकर्ता की एकता का संकेत देता है।

जामी के 'यूसुफ जुलेखा' में तिल केवल यूसुफके सौंदर्य का अलंकार नहीं, बल्कि सृष्टि की सृजनात्मक पूर्णता का प्रतीक बन जाता है। उन्होंने रूमी की परम्परा का अनुसरण करते हुए तिल को दैवी सौंदर्य के अनन्त समुद्र की एक बूँद कहा है – एक ऐसा सूक्ष्म बिंदु, जिसमें परमात्मा की सम्पूर्ण सृष्टि का प्रतिबिम्ब निहित है।

उनके अनुसार –

* यूसुफ का तिल ईश्वर की सृष्टि का केंद्र है, जहाँ सौंदर्य और सृजन का संगम होता है।

* 'ईश्वर ने अपनी सम्पूर्ण सृष्टि एक तिल की बूँद में रख दी' – यह रूमी की 'एकत्ववादी' सूफी दृष्टि का सशक्त काव्यात्मक रूप है।

* यह तिल खुदा की सर्वव्यापकता और उसकी अनन्त लीला का प्रतीक है, जहाँ पृथ्वी, आकाश, सूर्य, और जीव सब उसी 'बिंदु' में स्थित हैं।

मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने इस दृष्टि को और दार्शनिक बनाते हुए कहा कि संसार स्वयं केशपाश, तिल और भृकुटि की भाँति है – अर्थात् जो भी दृश्य वस्तु हमें दिखाई देती है, वह परलोक या परम सत्य का केवल प्रतिबिम्ब है। मनुष्य जब इस जगत के रूप-सौंदर्य में तिल, जुल्फ, या कपोल देखता है, तो वास्तव में वह दैवी सौंदर्य का अंश देख रहा होता है।

इस प्रकार, जामी और बिलग्रामी दोनों ने तिल को ब्रह्माण्डीय सौंदर्य और ईश्वर की आत्माभिव्यक्ति का प्रतीक माना है।

जामी के लिए वह सृष्टि के रहस्य का केन्द्र-बिंदु है, और बिलग्रामी के लिए प्रत्येक दृश्य जगत में परम सत्य का झिलमिलाता प्रतिबिम्ब।

अतः सूफी सौंदर्य-दर्शन में 'तिल' लौकिक आकर्षण नहीं, बल्कि अलौकिक चेतना का सूक्ष्म प्रतीक बनकर आत्मा और परमात्मा के मध्य एकत्व का संकेत प्रदान करता है।

रिनल्ड निकल्सन ने रूमी के 'तिल' विषयक काव्य की व्याख्या एक आध्यात्मिक रूपक के रूप में की है। उनके अनुसार, यह तिल किसी लौकिक सौंदर्य का अंग नहीं, बल्कि 'रूहे-इंसानी' (मानव आत्मा) की एकता का प्रतीक है।

निकल्सन का अभिप्राय यह है कि –

'इंसाने कामिल' (पूर्ण मानव) ईश्वर के सौंदर्य के कपोल पर अंकित तिल के समान है, क्योंकि उसी में सम्पूर्ण सृष्टि समाहित है और उसी के माध्यम से खुदा की सृजनात्मक चेतना संसार में प्रकट होती है।

उन्होंने जो अरबी पंक्तियाँ उद्धृत कीं –

'अल कबनु खदुम कदबदा मिन खालिहि,
ब–ल–क–द तजल्ला खलहु मिन खद्दिहि।'

उनका भाव यह है कि बाह्य जगत ईश्वर के कपोल से उत्पन्न हुआ है, और उस कपोल का तिल ही उसकी सृजनात्मक शक्ति का केंद्र है।

अर्थात्, सृष्टि ईश्वर की सुंदरता का विस्तार है, और तिल उस सौंदर्य का बीज जहाँ से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रस्फुटित होता है।

इसके आगे, यह सूफी भाव भारतीय काव्य–परम्परा में भी भिन्न रूपों में प्रकट होता है।

कुतबन की 'मृगावती' में संदेशवाहक, पवन, भंवर आदि प्रतीक उसी आध्यात्मिक तन्मयता के द्योतक हैं, जहाँ नखशिख–वर्णन केवल शारीरिक नहीं, बल्कि विरह और आत्मिक अनुराग का माध्यम बनता है।

इसी धारा में रसखान ने भी कृष्ण भक्ति में यही अनुभूति व्यक्त की – जहाँ कृष्ण का रूप, तिल, जुल्फ, नयन सब ईश्वर की दिव्य छवि का प्रतीक बन जाते हैं।

अत: निष्कर्षत: सूफी और भक्ति दोनों काव्यधाराओं में सौंदर्य का वर्णन (विशेषत: तिल, जुल्फ और नखशिख) केवल भौतिक नहीं, बल्कि परमात्मा और आत्मा के दिव्य मिलन का प्रतीकात्मक माध्यम है।

यह सौंदर्य–दर्शन मनुष्य को यह बोध कराता है कि रूप और प्रेम दोनों ईश्वर की सर्वव्यापक उपस्थिति के दर्पण हैं, और प्रत्येक 'तिल' में 'संपूर्ण ब्रह्माण्ड' की झलक निहित है।

◆◆◆